षष्ठ अध्याय –

उपसंहार

अध्याय षष्ठ

उपसंहार

साठोत्तरी कालखंड की पृष्ठभूमिपर सामाजिक चेतना के फल स्वरुप अनेक प्रकार के आंदोलनों का निर्माण हुआ। इन आंदोलनों ने युवा-छात्र शक्ति को सचेत और सजग बनाया। प्रस्थापित समाज रचना, सामाजिक वैषम्य, नैतिक मूल्य-विघटन, शैक्षिक क्षेत्र की समस्याएँ तथा अन्यान्य विषम परिस्थितियों के खिलाफ युवा-वर्ग चेतीत बना और आंदोलनों का जन्म हुआ। युवकों के व्दारा चलाये गये आंदोलन समाज के लिए कभी हितकारी तो कभी अहितकारी होते हैं। इच्छानुरुप सामाजिक परिवर्तन के हेतु अथवा अहितकारी परिवर्तनों के खिलाफ आंदोलन खडे किये जाते हैं। अहितकारी परिवर्तनों के खिलाफ "नर्मदा बचाव" आंदोलन एक अच्छा उदाहरण हो सकता है।

साठोत्तरी कालखंड में सामाजिक आंदोलन, सुधारवादी आंदोलन, परिवर्तनवादी आंदोलन, क्रांतिकारी आंदोलन, निषेधात्मक आंदोलन, युवा आंदोलन, छात्र-आंदोलन, कृषक आंदोलन, मजदूर आंदोलन आदि आंदोलनों के विविध आयाम हमें देखने को मिलते हैं। इन सारे आंदोलनों के पिछे युवा-छात्र संगठन शक्ति बहुत बडा योगदान निभाती है। राष्ट्रीय पुर्ननिर्माण, शैक्षिक समस्याओं के समाधान से संबध्द बनकर आज छात्रों के विविध संगठन महत्वपूर्ण योगदान निभा रहे हैं। छात्रों के हित के लिए बाधक शक्तियों के खिलाफ, प्रवेश के लिए आनेवाली कठिनाईयों के खिलाफ, शिक्षा संस्थाओं एवं विश्वविद्यालयों मे होनेवाली अनहोनियों के खिलाफ, फीस संबंधी कुलगुरु की अवैध नीति के खिलाफ, शिक्षा क्षेत्र में बढती हुई आपप्रवृतियों एवं विकृतियों के खिलाफ, छात्रावास की असुविधाओं के खिलाफ, परीक्षा में होनेवाले भ्रष्टाचार के खिलाफ, नकल उतारने की प्रवृत्ति के खिलाफ, आरक्षण संबंधी सरकारी नीतिके खिलाफ आज युवक छात्रों के कई संगठन संघर्ष कर रहे हैं। सार्वजनिक क्षेत्रों में स्थित साप्ताहिक अस्पताल सुविधा, खूनदान, झोपडपट्टी सुधार, अकालग्रस्त, बाढग्रस्त और भूचाल ग्रस्त इलाके में जाकर श्रमदान, राजकीय और सामाजिक मूल्यों की सुरक्षा, भ्रष्टाचार का विरोध आदि सेवाभावी कार्य के लिए भी कई छात्र संगठन आज महत्वपूर्ण योगदान निभा रहे हैं। "युवक क्रान्ति दल" इसका अच्छा उदाहरण है। आज छात्रसेना, छात्रभारती, अखिल भारतीय छात्रसंगठन आदि कई छात्रों के संगठन राष्ट्रनिर्माण के हेतु तथा शिक्षा क्षेत्र की कमियों को दूर करके नये पाठयक्रम की निर्मिति के हेतु प्रयत्नबध्द हो रहे हैं। विश्वंभरनाथ उपाध्याय के "पक्षधर", 1971, काशीनाथ सिंह का "अपना मोर्चा", 1972, भैरवप्रसाद

गुप्त का "नौजवान", 1972, शिवप्रसाद सिंह का "गली आगे मुड़ती है", 1974 गो' "लाल-पीली जमीन", 1976, सुदर्शन मजीठिया का "उखडी हुअी आंधी", 1979, ' "कालेज स्ट्रीट के नये मसीदा" और "नई दिशा" आदि उपन्यासों में उपर्युक्त छात्र-संगठन ... की विविध शक्लों का परिचय हमें मिलता है।

हमने शिवप्रसाद सिंह के "गली आगे मुडती है", 1974, में चित्रित छात्र आंदोलनपर सोचते हुए आज विश्वविद्यालयों में मौजुद अव्यवस्था की ओर भी संकेत करने का प्रयत्न किया है। आज के शैक्षिक क्षेत्रों में व्याप्त अशांती, आज के छात्रों की उग्रवादिता, दकियानूसी प्रथाओं के प्रति छात्रों का संघर्ष, विश्वविद्यालयीन माहौल में उचित वातावरण का अभाव, विश्वविद्यालयीन पदाधिकारियों और प्राध्यापकोंकी गिरती हुअी प्रतिष्ठा, सामाजिक समस्याओं से सिलिभूत होनेवाले सैध्दांतिक मूल्य, विश्वविद्यालयीन कार्यप्रणाती पर राजनीतिक दबाब, विश्वविद्यालयीन क्षेत्र में बढ़ती यौन-कुंठा, शैक्षिक पाठयक्रम में अभावग्रस्तता, सामाजिक और आर्थिक जीवन की समस्याओं के परिणाम स्वरुप युवक छात्रों में फैली अनुशासनहीनता, राजनीतिक व्यवस्था के प्रति असंतोष, आज की अनुपयोगी शिक्षा प्रणाली, विश्वविद्यालयीन पाठयक्रम परिवर्तन के लिए ठोस कदम उठाने की प्रवृत्ति का अभाव, निरुपयोगी उपधियों का लगा बाजार, आज की शिक्षा पध्दति में छात्रों में चरित्र गठन का विकास करने, निर्णय क्षमता बढाने, समन्वयात्मक दृष्टिकोण का निर्माण करने, आत्मबल को बढाने की स्थिति का अभाव, शैक्षिक जगत और समाजजीवन के बीच बढ़ती हुअी खाई, ऐसी स्थिति में बेराजेगारी से ग्रस्त छात्रों में निर्मित विद्रोह आदि छात्र असंतोष को उकसानेवाली स्थितियाँ आज सर्वत्र देखने को मिलती हैं। इन विषम परिस्थितियों पर भी शिवप्रसादजी ने गहराई से "गली आगे मुड़ती है" में सोचा है।

शिक्षा प्रचार और प्रसार के बहाने शिक्षा संस्थाओं का बढ़ता हुआ विस्तार, इस विस्तार के साथ-साथ शिक्षा संस्थाओं पर हावी होनेवाला राजनीतिज्ञों का दबाव, अयोग्य लोगों का इस क्षेत्र में हुआ प्रवेश जातीय भेदाभेद की नीति को शिक्षा क्षेत्र में आरक्षण के रुप में मिला हुआ अनुचित प्र[illegible]य, योग्यता प्राप्त अध्यापाकों में फैली निराशा, प्राध्यापकों की जीवनप्रणाली और कार्यप्रणालीपर राजनीतिक दबाव तंत्र, विश्वविद्यालयों में बढ़ती हुअी गुटबंदी, इस गुटबंदी के शिकार बने ग्रामीण एवं पिछडे छात्र आदि से पूरे शैक्षिक जगत में प्रदूषण फैल गया है। इन अप्रवृत्तियों को हटाने के लिए और विश्वविद्यालयों की संरचना, प्रशासन और कार्यप्रणाली में परिवर्तन के लिए आज काफी प्रयास किये जा रहे हैं परंतु, अभी तक इस दिशा में अधिक सफलता प्राप्त नहीं हो चुकी है।

शिवप्रसादजी ने डॉ. भट्टाचार्य के माध्यम से इस क्षेत्र में फैले प्रदूषण पर व्यंग्य किया है।

छात्रशक्ति की मानसिक कुंठा बढने लगी है। स्वतंत्र भारत की आर्थिक और राजनीतिक शक्तियों के कारण युवा-छात्र-शक्ति स्मशानसेवी बनने को मजबूर हो रही है। छात्र इस प्रतिकूल स्थिति में गुमराह होते जा रहे हैं। नशीली वस्तुओं का प्राशन करने में छात्र-शक्ति कृतार्थता समझने लगी है। आज के समाज में वैचारिक, सांस्कृतिक, सैध्दांतिक बढनेवाली गिरावट के कारण छात्र-शक्ति आक्रोश से भर उठी है। आक्रोश जन्य छात्र-शक्ति क्रांति की तरफ बढने लगी है। आत्मविभाजित छात्र-शक्ति सामाजिक गतिविधियों से हटकर नीडसेवी बनती जा रही है। छात्र शक्ति का आत्मविभाजित वर्ग सामाजिक परिवेश के साथ समझौता करने को तैयार हो रहा है। आज के छात्रोंके साहसिक और रचनात्मक मानस को यथास्थितिवाली शक्तियों ने ठंडा बनाना शुरु कर दिया है। आज की छात्र-शक्ति भविष्यत से उदास, वर्तमान से बेहद खीज गयी है। छात्र-शक्ति के पास रचनात्मक उर्जा होने के कारण वह अच्छे भविष्यत की कामना करती है परंतु आज यह शक्ति अन्यायी और आतंकपूर्ण परिस्थितियों से घिरने के कारण आक्रमक एवं विद्रोही बन गई है। छात्र-शक्ति को अपने अधिकारों से वंचित किये जाने के कारण वह आक्रोश से भर उटी है। छात्र-शक्ति की संकल्प-शक्ति को शासनतंत्र की भयावह शक्ति से टकराना पड़ता है, तब यह शक्ति कभी कभी अकेली पडने लगती है और मन को इस स्थिति में गहरा धक्का लगता है। इस हालत में छात्र-शक्ति की संघर्ष की धार बोथरी बनती है। इस हालत में छात्र-शक्ति भीड बन जाती है या अपने गुस्से को पीकर सामाजिक प्रक्रिया से हटकर अलग हो जाती है। छात्र-शक्ति में स्थित विद्रोह की दृष्टि नकारात्मक नहीं होती। जब तक उस दृष्टि को सामाजिक मूल्य परकता से नहीं जोडा जाता तब तक यह शक्ति केवल निषेध को ही वरण करती रहेगी। आज की छात्र-शक्ति में स्वार्थांधता बढ़ती जा रही है। आज के छात्र अपनी अस्मिता के इन्कारे जाने के विरुध्द संघर्ष करना चाहते हैं। आज के छात्र सुविधा भोगी बनना चाहते हैं। उपर्युक्त सभी बातें शिवप्रसादजीने "गली आगे मुडती है" के माध्यम से स्पष्ट कर दी है।

"गली आगे मुड़ती है" उपन्यास के माध्यम से युवा आक्रोश की विविध शक्लों को तलाश ने का प्रयत्न करके काशी नगरी के सांस्कृतिक बोध को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है। आज के छात्रों में स्थित युवा-शक्ति की उर्जा या आज के छात्रों की प्रस्त होती हुआी मानसिकता पर भी प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है। छात्र-शक्ति की क्रान्तिकारी प्रवृत्ति और सामाजिक गतिविधियों से कटकर नीड़ सेवी बनने की वृतित को, रामानंद तिवारी की आत्म-भीरुता और हरिमंगल के साहसी मिजाज के माध्यम से हम ने तलाशने का प्रयत्न किया है।

हमने प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबंध में छात्रनीति की नानाविध शक्लों, उनकी प्रवृत्तियों के विविध आयामों, उनकी स्वभावगत विशेषताओं का स्थान स्थान पर निर्देश किया है। समाज और छात्र-शक्ति के बीच का संघर्ष आज नये-नये रुप धारण कर रहा है। आज का छात्र परिवर्तन मे विश्वास रखना चाहता है। वह भौतिकवाद, वैज्ञानिकता, बुध्दिवाद, मानवतावाद, राष्ट्रीय चेतना, जनतंत्रवाद, भेदोपभेदरहित आदर्श समाज व्यवस्था, नारी स्वातंत्र्य आदि पर आस्था प्रकट कर रहा है। प्रस्तुत लघु-शोध प्रबंध में हमने छात्रजीवन की यथार्थता, सत्यता, उनका स्वतंत्र व्यक्तित्व, उनके जीवनमूल्य आदि पर भी गहराई से सोचा है। इस उपन्यास में चित्रित छात्र जीवन में स्थित पीडा, आतंक, निराशा, भ्मक्रांतता, आत्मभीरुता, अनिश्ययवादिता, चिंता, विवशता, निरर्थकता, अशांतता, आत्मसंघर्ष, आत्मनिर्वासन, बेकारी, घुटन साहसिकता आदि को भी तलाश ने का प्रयत्न हमने किया है।

यहाँ रामानंद तिवारी जैसे छात्रों की आत्मभीरुता उसकी अनिश्चयवादी मनस्थिति, हर स्थिति के साथ समन्वय करने की उसकी मानसिकता, वैचारिकता का अभाव न होकर भी उसकी दांवादौल स्थिति के माध्यम से यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि, आज के युवा छात्र-शक्ति की रामानंद तिवारी के रुप में एक अलग शक्ल प्रस्तुत हो रही हे। ऐसे रामानंद आज भी विश्वविद्यालयीन छात्रों में स्थित हैं जो परिस्थिति से मजबूर बने हुए हैं। देवनाथ जैसे साहसिक छात्र भी हैं जो टूटेंगे परंतु झुकेंगे। नहीं को अपना रहे हैं। देवनाथ के रुप में प्रतिशोध लेने की भावना से उतारु हुआ क्रांतिकारी छात्र-शक्ति की दूसरी शक्ल हमने तलाश की है। छात्र-शक्ति भीड बननेपर समाज जीवनपर होनेवाला दुष्प्रभाव भी यहाँ देखने को मिलता है। प्रस्तुत आलोच्य उपन्यास का छात्र आंदोलन भाषा-विषयक न रहकर इसमें अनेक विकृतियों का जनम हुआ है। डॉ. भट्टाचार्यजी को घिराव डालना, उन्हें पीटने की तैयारियाँ करना आदि बातों से इन विकृतियों का पता चलता है। छात्रआंदोलन के नेताओं की हासिलवादी प्रवृत्तिपर भी यहाँ रज्जो का चिंतन उचित लगता है। युवाशक्ति की विध्वंसक प्रवृत्ति, गलतनीति पर भी यहाँ प्रकाश डाला गया है। युवा शक्ति के पतन के लिए समाज ही जिम्मेदार है इसका समर्थन यहाँ देवनाथ देता है। व्यक्तिगत स्वार्थ, हासिलवादी नीति, शराब खोरी, भोगासक्ति, विध्वंसक प्रवृत्ति आदि के कारण युवा-शक्ति गुमराह बनकर विध्वंसक बनती जा रही है। इसपर लेखक शिवप्रसादजीने चिंता व्यक्त की है। इसी के परिणाम स्वरुप उनके आंदोलन असफल बनते जा रहे हैं।

आजकल देश के सभी विश्वविद्यालयों में कम अधिकमात्रा में आंदोलनों की हवा बह रही हैं। भारत के विश्वविद्यालय क्रांतिवारी आंदोलनों के अड्डे बने हुए हैं। अग्निकांण्ड, तोड-फोड,

हिंसाचार बढते जा रहे हैं। प्राध्यापक छात्रों का समर्थन गलत ढंग से कर रहे हैं, छात्र आंदोलनों पर प्राध्यापक विविध प्रकार की प्रतिक्रियाएँ व्यक्त कर रहे हैं, परिणामस्वरुप छात्रशक्ति गुमराह होती जा रही है और सामाजिक असुरक्षितता निर्माण होती जा रही है। कभी भाषा के नाम पर, कभी जातीयता के नाम पर, कभी धर्म और सांप्रदायिकता के नाम पर, कभी बेकारी के नाम पर, कभी भ्रष्टाचार के नाम पर छात्र-शक्तियाँ एक-दूसरे से टकराने लगी है।

इस हालत में छात्र शक्तियों को उकसाने का काम कअी बाहय शक्तियाँ कर रही हैं। कभी-कभी बदले की तीव्र भावना के कारण छात्र-शक्ति प्रधुब्ध बनती जा राही है, कभी छात्र-संगठन के नेता उन्हें अपने स्वार्थ के हेतु उकसाने का प्रयत्न कर रहे हैं, राजनीतिक नेता अपने स्वार्थ के लिए इस शक्ति से खिलवाड़ कर रहे हैं, इन सभी छात्र आंदोलन की गतिविधियों पर शिवप्रसाद सिंह ने "गली आगे मुड़ती है" में गहराई से चिंतन किया है।

आज छोटे-छोटे कारणों से छात्र-संघर्ष के लिए आमदा हो रहे हैं। गुजरात विश्वविद्यालय, अहमदाबाद के छात्रों ने बस कंडक्टर से झगडा होने के कारण बसे जलाई, , रांची विश्वविद्यालय में रेस्तरावालों से झगडा होने पर लूट-पाट, और आगजनी की घटनाएँ घटी, गढ़वाल विश्वविद्यालय में छात्रसंगठन के चुनाव के बाद फसाद हुआ, इलाहाबाद विश्वविद्यालय में छात्रों के दो गुटों के बीच संघर्ष के कारण फसाद हुआ, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में स्थित चिकित्सालय में एक छात्र की मौत के कारण छात्र-शक्ति ने हिंसक रुप धारण किया, मराठवाडा विश्वविद्यालय में नामांतर को लेकर फसाद हुआ ऐसी अनेकसी घटनाएँ हमारे सामने आती हैं, जिससे छात्र-शक्ति हिंसक रुप धारण करके समाज में अशांति का निर्माण करती है। । छात्रों की इस फसाद की नीति पर आठवें दशक में कअी उपन्यास लिखे गये जिनमें छात्र-शक्ति के आंदोलनात्मक विविध आयामों पर गहराई से सोचा गया है। काशीनाथ सिंह का "अपना मोर्चा' और शिवप्रसाद सिंह का "गली आगे मुड़ती है" इसके अच्छ उदाहरण हो सकते हैं।

"गली आगे मुड़ती है" मे युवा फरस्ट्रेशन, युवा आक्रोश, विश्वविद्यालयीन छात्रों में बढता असंतोष, शोषण, अशैक्षिक परिवेश आदि पर यथार्थ चिंतन किया गया है। शिवप्रसादजी ने युवाछात्र शक्ति पर गंभीरता से चिंतन करके कही पर भी अपरिपक्वता का अनुभव होने नहीं दिया है और युवा छात्र--समस्याओं को पूरी तरह आत्मसात करके यथार्थ रुप में आंदोलन की शक्लें

दिखाने का प्रयत्न किया है। इस उपन्यास में वैचारिक गंभीर विश्लेषण, रचनात्मक शक्ति की प्रबलता, विषय की सही पकड़ देखने को मिलती है।

आज के छात्र समाज को बदल ने के लिए विद्रोह को आवश्यक मानने लगे हैं, क्रांति को नहीं। छात्र इस नतीजे पर आये हैं कि प्रत्येक समूह क्रांति का स्वरुप राजनीति से जुडाव रखता है जिसका अंत सत्ता और जडता हो सकता है। सजग व्यकित के लिए विरोध और विद्रोह एक मात्र रास्ता रह गया है। शासन के गलत निर्णयों का विरोध समाज की खोखली परंपराओं का विरोध आज के छात्र कर रहे हैं। छात्रों का विरोध छात्र आंदोलन के माध्यम से आज प्रकट हो रहा है। इस विद्रोह ने समाज को व्यवस्था के, सुख, सुविधा और समृध्दि के कटघरे में खडा कर दिया है। आज के छात्र आधुनिक पश्चिमी सभ्यता की ओर आकर्षित होते जा रहे हैं। आज के छात्रों में राजनीतिक निर्णयों के खिलाफ विद्रोह बढता जा रहा है। "मंडल आयोग" के खिलाफ आंदोलन इसका अच्छा उदाहरण हो सकता है। आज के छात्र देश की राजनीति में हिस्सेदारी की आकांक्षा रख रहे हैं।

आज के छात्र क्रांति की अपेक्षा परिवर्तन के पक्षधर बन रहे हैं। छात्रों और बुध्दिजीवियों ने समस्त क्रांतिके पतन को समझ लिया है इसलिए वे क्रांतिके वाहक न बनकर केवल विरोध से परिवर्तन लाना चाहते हैं। इसपर भी शिवप्रसादजीने चिंतन किया है।

छात्र–शक्ति के प्रश्नों के उत्तर आज के समाज के पास नहीं हैं। इस हालत में छात्र–शक्ति समस्त समाज के जडों को हिलाने को आमदा रही है। विकासोन्मुखी भारतीय विश्वविद्यालयों में आज औपनिवेशिक शिक्षा के विस्तार का खतरा निर्माण हो रहा हे। विश्वविद्यालयोंमें छात्र संख्या तेजीसे बढती जा रही है। बेकारी और बेरोजगारीने भयावह रुप धारण किया है, स्कूलों–कॉलेजों में पढने–लिखने जैसी गलत शिक्षा दी जा रही है। व्यक्तित्व की विशिष्ट योग्यता एवं प्रतिभा को चुनौति देनेवाली शिक्षा–व्यवस्था आज विश्वविद्यालयों में उपलब्ध नहीं है। शिक्षा का संबंध रोजी–रोटी या कृतार्थ जीवन के साथ न जुडा होने के कारण शिक्षित बेरोजगारोंकी संख्या में भयावह वृध्दि होती जा रही है। भारतीय विश्वविद्यालयों में दी जानेवाली शिक्षा–दीक्षा में भ्रद्रतापर जोर दिया जा रहा है जो गलत है। भारतीय विश्वविद्यालयों में दी जानेवाली शिक्षा के स्वरुप और अर्थ में परिवर्तन की जरुरी है, जो रुस अमरीका और स्वीडन में है। शिवप्रसादसिंहजीने छात्र–आंदोलन के सिलसिले में उपर्युक्त बातों की ओर भी कम–अधिक मात्रामें जरुर संकेत दिये हैं।

केवल छात्र–शक्ति की गलत – नीति को दर्शानेका काम ही शिवप्रसादसिंहजी ने न करके छात्र शक्ति को सही रास्ता दिखाने का प्रयत्न भी किया है। आज की छात्र–शक्ति पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता को इन्होंने जरुरी माना है। छात्र–शक्ति में उभरी हुओ अस्तित्ववादी प्रणाली के फलस्वरुप उनके सामने उभरे हुए अनेक सवालों को भी शिवप्रसादजीने नजरांदाज किया है। मूल्य–विहीनता के अंधेरेमें टकराते हुए भटकते हुए आज के छात्र अधिक संवेदनशील बनते जा रहे हैं इस पर भी दृष्टिक्षेप किया है।

"गली आगे मुडती है" में शिवप्रसाद सिंह ने छात्र असंतोष और छात्र–अस्मिता को प्रबल रुप में उभारकर रखा है और छात्र–शक्ति की अस्मिता की तलाश का स्तुत्य प्रयत्न किया है। सन 1960 के बाद का समय–बोध के निकष पर कसा हुआ यह एक अच्छा प्रयोगात्मक उपन्यास लगता है। इस उपन्यास में स्थित संकेत पाठक को अपनी ओर आकर्षित करके उपन्यास की दृष्टि और दिशाओं पर सोचने को विवश करते हैं। युवा–छात्र आक्रोश की विभिन्न शक्लों से पाठकों को परिचित कराना इस उपन्यास का प्रमुख उद्देश्य लगता है। रामानंद, हरिमंगल, रज्जो, किरण, आरती, शोभना, बक्कड जेसे विविध कर्म और योग से जुड़े पात्रों के माध्यम से लेखकने अपने इस मंतव्यको परिपूर्ति देने का काम किया है।

प्रस्तुत लघु–शोध प्रबंध में हमने प्रारंभ मे विविध जनांदोलनोंके माध्यम से आज आंदोलनों की और संगठित शक्ति की आवश्यकता को विशद किया है। इस लघु–शोध प्रबंध के छात्र आंदोलन पर सोचने के पहले पृष्ठभूमिके तौर पर आजादी के बाद निर्मित कृषक आंदोलन, दलित–मुक्ति–आंदोलन, मिल मजदूर आंदोलन, नारी–मुक्ति आंदोलन, युवा आंदोलन आदिपर सोचकर यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि आज आंदोलनों की आवश्यकता क्यों और किसलिए है।

इस लघु शोध प्रबंध में हमने काशी नगरी की पृष्ठभूमिपर निर्मित अनेक सामाजिक समस्याओंको "गली आगे मुडती है" के माध्यम से तलाशनेका प्रयत्न किया है। धार्मिक आडंबर की समस्या, विश्वविद्यालयों मे स्थित भ्रष्टाचार की समस्या, बेरोजगारी की समस्या, गुंडई की समस्या, भाषा आंदोलन की समस्या, पुलिस भ्रष्टाचार की समस्या, ग्राहकोंको ढगाने की समस्या, अश्लिलता की समस्या, आतंकवाद की समस्या, जातीयवाद की समस्या आदि समस्याओं के माध्यम से पुनीत काशी नगरी में स्थित विविध समस्याओंका चित्रण करके इस समस्याओं के समाधान के लिए लेखक व्दारा दिये गये समाधान को तलाशनेका प्रयत्न किया है।

"गली आगे मुडती है" चित्रित छात्र आंदोलन पर विचार करते हुए हमनें साठोत्तर कालखंड में और खास तौरपर आठवें दशक के हिंदी उपन्यासों में छात्र-आंदोलन के विविध पहलुओंपर सोचनेवाले विश्वंभरनाथ उपाध्याय के "पक्षघर", 1971, काशीनाथसिंह के "अपना मोर्चा", 1972, भैरवप्रसाद गुप्त के "नौजवान", 1972, गोविंद मिश्र के "लाल-पीली जमीन", 1976, सुदर्शन मजीठिया के "उखडी हुआी आंधी", 1979 आदि उपन्यासोंके संदर्भ को प्रस्तुत किया है। इन उपन्यासों के आशय के आधार पर वर्तमान युवा-छात्रोंका आक्रोश, विश्वविद्यालयीन माहौल में पनपा असंतोष, छात्रों की समस्याएँ आदि पर प्रकाश डालने का प्रयत्न करके भारतीय विश्वविद्यालयोंमे छात्र आंदोलन की प्रवृत्तियों को खोजने का प्रयत्न किया है।

प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबंध में "गली आगे मुडती है" के शिल्पविधान पर सोचते हुए यह स्पष्ट कर दिया है कि प्रस्तुत उपन्यास में कथात्मक शिल्प का प्रयोग किया गया है। इसमें रामानंद और किरण की अलग-अलग कथाएँ प्रस्तुत की गयी हैं। उपन्यास के बहुतांश भाग में रामानंद कथा प्रस्तुत करता है तो शेष अंश में किरण कथा कहती है। यह शिल्पनियोजन सायास है। काशी के सांस्कृतिक बोध की विविधता को शिल्प में आबध्द कर दिया है। एकात्मक सांस्कृतिक बोध के लिए एकात्मक शिल्पबंध का प्रयोग यहाँ उपन्यासकारने किया है। सांस्कृतिक बोध की विविधता के कारण "गली आगे मुडती है" में बहुसंरचनात्मक शिल्प का प्रयोग किया गया है।

इस उपन्यास के सभी पात्र भिन्न-भिन्न समाजके प्रतिनिधि लगते हैं फलतः उनके संस्कार और चिंतन में भिन्नता देखने को मिलती है। इन पात्रों के जीने की अपनी नीजी-स्थितियाँ हैं। नितांत एकांत परिस्थिति में जीते हुए भी आधुनिक विचारधाराने उनके संस्कार और मन को बेहद प्रभावित किया है। इन सभी पात्रों पर नये-भाव-बोध का प्रभाव लक्षित होता है। ये पात्र स्थितियोंके अस्वीकार से न केवल संदेह उत्पन्न करते हैं बल्कि इस रचना के पात्र लेखक के विचारोंकी बैसाखियों का सहारा ग्रहण कर लेते हैं। इनपात्रों के बारेमें भ्रम पैदा होता है। इस उपन्यास में इसलिए इन पात्रों की वास्तविकता और जीवंतता अक्षुण्ण रह जाती है। रामानंद भीरु और भावुक है, उसकी करनी और कथनी में बडा अंतराल लक्षित होता है। जयंती और किरण से आंतरिक रुप से जुडकर भी वह स्वीकार के धरातल पर अस्थिर बन जाता है। हरिमंगल अपने साहस को नियंत्रित नहीं कर सकता, रज्जो अपमान को पी लेती है, शोभना सुविधा--गृह में बंदी बन जाती हैं, वह मुक्ति चाहती है परंतु अभीष्ट की प्राप्ति के लिए कुछ करना नहीं चाहती। क्क्कड स्वार्थ में जकडा हुआ हासिलवादी पात्र

है। इन चरित्रों का अधूरापन समकालीन भाव--बोध की वास्तविकता लगता है। लेखक ने इन पात्रों के अधूरे पन को वास्तविक परिवेश में प्रस्तुत किया है। उपन्यास के सभी पात्र अपनी लघुता और निरीहता की परीधि में महान लगते हैं।

भाषा परिवेश और संस्कार से जुडी हुअी होती है। व्यक्ति जब नये परिवेश में पदार्पित होता है, तब उसकी भाषा पर नये परिवेश के साथ उसके पुराने संस्कार भी हावी होते हैं। व्यक्ति नये परिवेश के साथ अपनी भाषा को नियोजित करता है और अपने संस्कार-जन्य भाषा को त्यागना भी नहीं चाहता ऐसी स्थिति में व्यक्ति की भाषा में परिवेश जन्य और संस्कार-जन्य भाषा का अच्छा अनुपात देखने को मिलता है। विविध भावबोधों एवं संस्कारों से प्रभावित पात्रों की भाषा इस स्थिति में बडी अर्थव्यंजक लगती है। इस हालत में दो भाषाओं के मिश्रण से तीसरे किस्म की भाषा का निर्माण होता है। खास तौरपर आँचलिक उपन्यासों की भाषा ऐसी होती है। "गली आगे मूडती है" की भाषा इस सिध्दांत पर पूरी उतरती है। इस उपन्यास में विविध भाषिक प्रयोग देखने को मिलते हैं। गुजराती लडकी किरण अपने परिवार में गुजराती बोलती है, लेकिन रामानंद के साथ खडीबोली हिंदी में बातचीत करती है। रज्जो परिवार में 'काशिका" बोली का प्रयोग करती है लेकिन रामानंद के साथ खडीबोली हिंदी में बोलती है। परिवेश और पात्रों की विशिष्टता के संप्रोषण में इस उपन्यास का भाषाप्रयोग प्रशंसनीय और सफल लगता है। छात्रों व्दारा चलाये गये हिंदी आंदोलन के समर्थन ओर विरोध में दिये गये तर्कों के लंबे-लंबे प्रसंग तथा उपन्यास में बार-बार रामानंद और किरण के प्रसंगो की पुनरावृत्ति से उपन्यास का शिल्प थोडास दुर्बल बनने की आशंका मन में पैदा होती है। ये प्रसंग पाठकों के मन में उबकाई पैदा करके उपन्यास की गति को आहत करते हैं। लगता है कि "अलग-अलग वैतरणी" के आदर्श बोध से " गली आगे मूडती है' उपन्यास पूर्ण मुक्ति नहीं पा सका है फिर भी आठवें दशक के उपन्यासों की प्रथम पंक्ति में इस उपन्यास ने अपना स्थान निश्चित रुप में सुरक्षित बनाये रखा है।

"गली आगे मुडती है" में चित्रित छात्र-आंदोलन पर सोचते हुए हमने आज के आंदोलनों की देशके सामने खडी एक चुनौती, इन आंदोलनों का सामाजिक और राजनीतिक गतिविधियोंपर पडा बुरा असर, छात्र-आंदोलनों की आज के युगमें आवश्यकता, छात्र-आंदोलन की विविध शक्लें, छात्र आंदोलन की गलत दिशा, गलत छात्र आंदोलनसे निर्मित अशांति आदि पर गहराईसे सोचा है।

है। इन चरित्रों का अधूरापन समकालीन भाव-बोध की वास्तविकता लगता है। लेखक ने इन पात्रों के अधूरे पन को वास्तविक परिवेश में प्रस्तुत किया है। उपन्यास के सभी पात्र अपनी लघुता और निरीहता की परीधि में महान लगते हैं।

भाषा परिवेश और संस्कार से जुडी हुअी होती है। व्यक्ति जब नये परिवेश में पदार्पित होता है, तब उसकी भाषा पर नये परिवेश के साथ उसके पुराने संस्कार भी हावी होते हैं। व्यक्ति नये परिवेश के साथ अपनी भाषा को नियोजित करता है और अपने संस्कार-जन्य भाषा को त्यागना भी नहीं चाहता ऐसी स्थिति में व्यक्ति की भाषा में परिवेश जन्य और संस्कार-जन्य भाषा का अच्छा अनुपात देखने को मिलता है। विविध भावबोधों एवं संस्कारों से प्रभावित पात्रों की भाषा इस स्थिति में बडी अर्थव्यंजक लगती है। इस हालत में दो भाषाओं के मिश्रण से तीसरे किस्म की भाषा का निर्माण होता है। खास तौरपर आँचलिक उपन्यासों की भाषा ऐसी होती है। "गली आगे मूडती है" की भाषा इस सिध्दांत पर पूरी उतरती है। इस उपन्यास मैं विविध भाषिक प्रयोग देखने को मिलते हैं। गुजराती लडकी किरण अपने परिवार में गुजराती बोलती है, लेकिन रामानंद के साथ खडीबोली हिंदी में बातचीत करती है। रज्जो परिवार में "काशिका" बोली का प्रयोग करती है लेकिन रामानंद के साथ खडीबोली हिंदी में बोलती है। परिवेश और पात्रों की विशिष्टता के संप्रोषण में इस उपन्यास का भाषाप्रयोग प्रशंसनीय और सफल लगता है। छात्रों व्दारा चलाये गये हिंदी आंदोलन के समर्थन ओर विरोध में दिये गये तर्कों के लंबे-लंबे प्रसंग तथा उपन्यास में बार-बार रामानंद और किरण के प्रसंगो की पुनरावृत्ति से उपन्यास का शिल्प थोडास दुर्बल बनने की आशंका मन में पैदा होती है। ये प्रसंग पाठकों के मन में उबकाई पैदा करके उपन्यास की गति को आहत करते हैं। लगता है कि "अलग-अलग वैतरणी" के आदर्श बोध से " गली आगे मूडती है' उपन्यास पूर्ण मुक्ति नहीं पा सका है फिर भी आठवें दशक के उपन्यासों की प्रथम पंक्ति में इस उपन्यास ने अपना स्थान निश्चित रुप में सुरक्षित बनाये रखा है।

"गली आगे मुडती है" में चित्रित छात्र-आंदोलन पर सोचते हुए हमने आज के आंदोलनों की देशके सामने खडी एक चुनौती, इन आंदोलनों का सामाजिक और राजनीतिक गतिविधियोंपर पडा बुरा असर, छात्र-आंदोलनों की आज के युगमें आवश्यकता, छात्र-आंदोलन की विविध शक्लें, छात्र आंदोलन की गलत दिशा, गलत छात्र आंदोलनसे निर्मित अशांति आदि पर गहराईसे सोचा है।

प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबंध में हमने "गली आगे मुडती है" में चित्रित छात्र-आंदोलन के साथ-साथ इस उपन्यास के सभी पहलुओं पर गहराई से सोचकर यह स्पष्ट कर दिया हे कि, निश्चित रुप से यह उपन्यास आठवें दशक के उपन्यासों मे अग्रणी बन बैठा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

आलोच्य ग्रंथ :

1) शिवप्रसाद सिंह, "गली आगे मुड़ती है", राधाकृष्ण प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली, द्वि.सं. 1991

संदर्भ ग्रंथ

1) कृष्ण बिहारी मिश्र, आधुनिक सामाजिक आंदोलन और हिंदी साहित्य, आर्य बुक डेपो प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.संस्करण 1972.

2) रजनीकुमार, हिंदी कहानी के आंदोलन और उपलब्धियाँ और सिमाएँ, नॅशनल पब्लिशिग हाऊस दिल्ली, प्र. संस्करण 1986

3) महिप सिंह, चंद्रकांत बांदिवडेकर – साहित्य और दलित चेतना, अभिव्यंजना प्रकाशन, दिल्ली, प्र. संस्करण 1982

4) डॉ. जितेंद्र वत्स, साठोत्तरी हिंदी कहानी और साम्यवादी राजनीतिक चेतना साहित्य, रत्नाकर प्रकाशन कानपूर, प्र. संस्करण 1989

5) डॉ. रोहीणी अग्रवाल, हिंदी उपन्यासों में कामकाजी महिला, दिनमान प्रकाशन दिल्ली, प्र.संस्करण 1992

6) डॉ. एन्. एस्. गणेशन्, "हिंदी उपन्यास साहित्य का अध्ययन, राजपाल एण्ड सन्ज, दिल्ली, द्वि. संस्करण 1967

7) डॉ. सिताराम अकिंचन, युवजन समस्या एवं समाधान, प्रकाशक ज्योति, ज्योति संगम पथ, राँची, प्र. संस्करण 1992 ई

8) श्रीकान्त वर्मा, बीसवी शताब्दी के अँधेरे में, राजकमल प्रकाशन दिल्ली, प्र.संस्करण 1982

9) डॉ. पी. के. पद्मजा, हिंदी उपन्यास साहित्यकार वैचारिक आंदोलन का प्रभाव, पंकज पब्लिकेशन गढ, दिल्ली, प्र.संस्करण 1986

10) विश्वंभरनाथ उपाध्याय "पक्षधर" प्र.संस्करण 1971

11) डॉ. विवेकी राय, आधुनिक उपन्यास विविध आयाम, राजीव प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.संस्करण 1987

12) काशीनाथ सिंह "अपना मोर्चा" रचना प्रकाशन, 45–ए–खुल्दाबाद, इलाहाबाद – 1, प्र.संस्करण 1972

13) भीष्म साहनी, रामजी मिश्र, भगवती प्रसाद निदारिया, आधुनिक हिंदी उपन्यास राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. संस्करण – 1980

14) डॉ. भैरवप्रसाद, नौजवान, रचना प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र. संस्करण 1972

15) डॉ. रामदरश मिश्र, हिंदी उपन्यासों के सौ वर्ष, गिरनार प्रकाशन नयी दिल्ली, प्र.संस्करण 1984

16) गोविंद मिश्र, लाल–पीली जमीन, राजपाल एण्ड सन्स दिल्ली, प्र.संस्करण 1976

17) डॉ. महिप सिंह, हिंदी उपन्यास समकालीन परिदृश्य, लिपि प्रकाशन दिल्ली, प्र.संस्करण 1980

18) संपादक, डॉ. चंद्रकांत बांदिवडेकर, गोविंद मिश्र सृजन के आयाम , वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली, प्र. संस्करण 1990।

19) डॉ. पुष्पाल, हिंदी साहित्य आठवाँ दशक , सूर्य प्रकाशन दिल्ली, प्र.संस्करण 1984

20) डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा, हिंदी उपन्यासों का शिल्पविधान, अभय प्रकाशन कानपुर, प्र.संस्करण 1990

21) ब्रजभूषण सिंह "आदर्श", हिंदी के राजनीतिक उपन्यासों का अनुशीलन 1900–1963, रचना प्रकाशन इलाहाबाद 1, प्र. संस्करण 1970

22) डॉ. सत्यदेव त्रिपाठी, शिवप्रसादजी का परवर्तित कथा साहित्य, अमन प्रकाशन कानपुर, प्र.संस्करण 1993

23) प्रेमभटनागर, "हिंदी उपन्यास शिल्प बदलते परिप्रेक्ष, रचना प्रकाशन जयपूर, प्र.संस्करण 1968

24) डॉ.विवेकी राय, समकालीन हिंदी उपन्यास राजीव प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र. संस्करण 1987

25) गं.भा. सरदार, संपादक, महाराष्ट्र जीवन, भाग-1

26) बाबुराव बागुल, अध्यक्षीय भाषण, दूसरा महाराष्ट्र बौध्द साहित्य संमेलन, महाड।

27) डॉ.वायु.बी. घुमाळ
साठोत्तरी हिंदी और मराठी के सामाजिक उपन्यासोंका प्रवृत्तिमूलक तुलनात्मक अध्ययन, (1960-1980), पुणे विश्वविद्यालय की पीएच्.डी. उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबंध, अप्रकाशित, 1985

शोध प्रत्रिका :

1) संपादक, डॉ. वचनदेवकुमार "अनुषाक", शोध पत्रिका हिंदी विभाग, राँची विश्वविद्यालय अंक - 3, 1976

समीक्षा अंक :

1) डॉ.गोपाल - संपादक, उपन्यास कहानी और समीक्षा अंक, वर्ष 14, अंक 3, अक्तूबर-दिसम्बर 1980